भारतेन्दु युग में भारतेन्दु को केन्द्र में रखकर कुछ रचनाकारों का एक समूह तैयार हुआ जिसे 'भारतेन्दु-मण्डल' के नाम से अभिहित किया जाता है। भारतेन्दु-मंडल से आशय है - उस युग के कुछ ऐसे रचनाकारों से जो संवेदनात्मक स्तर पर एक-दूसरे के काफी निकट थे एवं एक-दूसरे से काफी जुड़े हुए थे। इस मण्डल के केन्द्र में भारतेन्दु थे और काशी उनकी गतिविधियों का मुख्य केन्द्र था। अधिकतर लेखक काशी और उसके आस-पास के नगरों के थे तथा कुछ ही इस क्षेत्र के बाहर के थे। इन रचनाकारों में - भारतेंदु, प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरी

नारायण चौधरी 'प्रेमघन', राधाचरण गोस्वामी, राधाकृष्ण दास, अंबिकादत्त व्यास आदि प्रमुख थे। ये तमाम रचनाकार नवजागरण के समान आदर्शों से प्रेरित थे और कवि वचन सुधा, हरिश्चंद्र पत्रिका, आनंद कादम्बिनी, हिन्दी प्रदीप, ब्राह्मण जैसी साहित्यिक पत्रिकाओं के जरिए एक-दूसरे से जुड़े थे। इन रचनाकारों ने कविता, नाटक, उपन्यास, निबन्ध, आलोचना-साहित्य की इन सभी विधाओं में लिखा। इनमें से उपन्यास, निबन्ध, आलोचना और पुस्तक समीक्षा की शुरुआत ही इस काल में हुई। दूसरी ओर, इन्होंने गद्य भाषा के रूप में खड़ी बोली को अपनाया और इसके कारण खड़ी बोली के लौकिक साहित्यिक परंपरा से इनका सहज ही सम्बन्ध जुड़ा। फलतः मुकरी और पहेलियों की और खुसरो वाली बोलियों का पुनरुद्धार हुआ। स्पष्ट है कि हिन्दी

साहित्य को संवेदना और शिल्प दोनों के ही धरातल पर स्वरूपगत विविधता प्रदान करने का श्रेय भारतेंदु मण्डल के लेखकों को जाता है।

भारतेन्दु-युग नवजागरण चेतना का प्रथम चरण था जहाँ राज भक्ति और देशभक्ति का अन्तर्विरोध्य विद्यमान था। भारतेन्दु लिखते हैं:-

"अंगरेज राज सुख साज सजै सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात, इहै अति ख्वारी॥"

यहाँ एक साथ राजभक्ति और देशभक्ति दोनों को अभिव्यक्ति मिली है। भारतेंदु ने यह महसूस किया कि भारत की दुर्दशा के लिए एक ओर विदेशी सत्ता द्वारा किया जा रहा शोषण जिम्मेवार है:-

"अँधाधुँध मच्यौ सब देसा,
मानहुँ राजा रहत विदेसा।"

तो दूसरी ओर इस दुर्दशा हेतु हम

स्वयं भी कम जिम्मेदार नहीं। प्रताप नारायण मिश्र लिखते हैं :-

" सर्वस लिये जात अंगरेज,
हम केवल लेक्चर को तेज ।

भारतेन्दु ने 1884 के बलिया व्याख्यान में समस्त भारतवासियों को हिन्दू माना, वहीं प्रेमघन का 'भारती भ्रात', हिन्दू-मुस्लिम, ईसाई, सिख, पारसी और जैन सभी को भारतीयता के एक सूत्र में जोड़ता है :-

" हिन्दू-मुस्लिम, जैन, पारसी, ईसाई सब जात।
सुखी होवें, हिय भरे प्रेमघन, सकल भारती-भ्रात

भारतेन्दु-मण्डल के रचनाकार केवल साहित्यकार ही नहीं थे, बल्कि के वे रंगकर्मी भी थे। इन्होंने एक ओर नाटक-रंगमंच संबंध पर जोर दिया, तो दूसरी ओर पारसी रंगमंच के विकल्प के रूप में हिन्दी के अव्यवसायिक रंगमंच की नींव डाली।

इनके साहित्य पर नवजागरण चेतना का असर साफ देखा जा सकता है और इसी असर के कारण ये सामाजिक सुधारवाद का संदेश लेकर उपस्थित होते हैं। यद्यपि भाषाई स्तर पर इन्होंने काव्यभाषा के रूप में ब्रजभाषा को ही अपनाया, लेकिन इनकी आधुनिक चेतना और नवजागरण की अभिव्यक्ति इनके गद्यों में मिलती है, जो खड़ी बोली में है। आगे चलकर यही खड़ी बोली द्विवेदी युग में मानक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित होती है। इन रचनाकारों ने साहित्यिक पत्रिकाओं के जरिए राष्ट्रीय-सांस्कृतिक विचार-विमर्श को एक महत्वपूर्ण दिशा दिया। आचार्य शुक्ल ने इनके योगदान को युगान्तकारी बतलाते हुए लिखा कि इन्होंने साहित्य को एक बार फिर से विशाल जनसमूह से जोड़ा।